॥ श्रीः ॥

तत्त्वबोधः ।

श्रीशंकराचार्य्यप्रणीतः ।

लाखग्रामनिवासिपण्डित-

मिहिरचन्द्रकृत-

भाषाटीकासहितः ।

सोऽयं

क्षेमराज-श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेंकटेश्वर" (स्टीम्) मुद्रणयन्त्रालये

मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

संवत् १९७८, शाके १८४३.

॥ श्रीः ॥

तत्त्वबोधः ।

श्रीशंकराचार्य्यप्रणीतः

लाँखग्रामनिवासिपण्डित-

मिहिरचन्द्रकृत-

भाषाटीकासमेतः ।

सोऽयं

क्षेमराज-श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेंकटेश्वर" (स्टीम्) मुद्रणयन्त्रालये

मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

संवत् १९७८, शके १८४३.

भूमिका ।

——:o:——

श्रीमद्वेदान्ताचार्यपरमपूज्यपादश्रीशंकराचार्यप्रणीततत्त्वबोधनामकमेतत्प्रकरणम्। एतच्च धर्मार्थकाममोक्षरूपचतुर्विधपुरुषान्तर्गतमोक्षसाधकवेदान्तशास्त्रमारुरुक्षोः पुरुषस्य प्रथमाधिरोहिणीति सर्वजनावगतम् ॥ एतस्य च भाषारसिकासाधारण्येन प्रसिद्धिमीहमानैः क्षेमराज-श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिभिर्भाषोद्धृतयेऽहमयोजिषि । मया चैतद्यथामति भाषायामुद्धृत्य विवरणोद्योरर्पित इति शम् ॥

लाँखग्रामनिवासी--

काशीस्थराजकीयप्रधानपाठशालापरीक्षोत्तीर्णः,

पण्डितमिहिरचन्द्रशर्मा.

तत्त्वबोधः

भाषाटीकासमेतः

वासुदेवेन्द्रयोगीन्द्रं नत्वा ज्ञानप्रदं गुरुम्॥मुमुक्षूणां हितार्थाय तत्त्वबोधोभिधीयते॥१॥

नत्वा श्रीचेतनं ब्रह्म जीवत्मैकत्वसिद्धये ॥
तत्त्वबोधस्य भाषायामुद्धारस्तु वितन्यते १ ॥

आरंभ करनेको इष्ट जो ग्रंथ उसकी निर्विघ्न समाप्तिके लिये और शिष्योंकी शिक्षाके अर्थ वासुदेवके स्मरणरूप और वासुदेवनामक अपने गुरुके नमस्काररूप--मंगलको करते हुए ग्रन्थ-कार-ग्रन्थके आरंभकी प्रतिज्ञा करते हैं कि ज्ञानके भली प्रकार दाता और योगी जनोंमें इंद्र;

जो वासुदेवेंद्र गुरु हैं उनको नमस्कार करके मुमुक्षुओंके हितके लिये तत्त्वबोधको कहते हैं अर्थात् जिसके विचारसे तत्त्वोंका बोध हो ऐसे ग्रन्थको रचते हैं-- और इन श्रुतियोंमें भी वासुदेव रूपही गुरुको कहा है कि, वसे हैं भूत(प्राणी)जिस-में उसे वासु और प्रकाश जो करे उसे देव कहते हैं अर्थात् सब प्राणियोंके आश्रय और संपूर्णजग-त्के प्रकाशक ब्रह्मरूप गुरु अथवा पूर्वोक्त ब्रह्मरूप जो श्रीकृष्णचन्द्र--और गुरुगीतामें भी लिखा है कि नित्य--शुद्ध और आभासरहित--निराकार निर्मल और नित्य बोधरूप चिदानन्द ब्रह्मरूप जो गुरु, उनको नमस्कार करता हूँ-गूढ जो विद्या

---

१ वसंत्यस्मिन्भूतानीति वासुदेवः ।

२ नित्यं शुद्धं निराभासं निराकारं निरञ्जनम् । नित्यबोधं चिदानन्दं गुरुं ब्रह्म नमाम्यहम् ॥ १ ॥ गूढा विद्या योगमाया देहस्थाज्ञानभञ्जनम् ॥ एवं स्वप्रकाशेन गुरुशब्देन कथ्यते ॥ २ ॥

वह योगमाया है और यह देह अज्ञानसे उत्पन्न है इस देहमें जो स्वप्रकाश चेतनका उदय है वही गुरु शब्दसे कहाजाताहै--तात्पर्य यह है कि परब्रह्मरूप योगी जनोंके स्वामी ज्ञानके दाता जो वासुदेवेन्द्र गुरु हैं उनको नमस्कार करनेके अनन्तर मुमुक्षु-ओंके हितार्थ तत्त्वबोध प्रकरणको कहते हैं॥ १॥

साधनचतुष्टयसंपन्नाऽधिकारिणां मोक्षसाधनभूतं तत्त्वविवेकप्रकारं वक्ष्यामः ।

मोक्षके चारों साधनोंसे युक्त जो अधिकारी उनके मोक्षका हेतु जो तत्त्वोंके विवेक (पृथक्‌र ज्ञान)का प्रकार, उसको कहते हैं--अर्थात् पृथिवी जल तेज वायु आकाश रूप जो पञ्च महाभूत हैं उनमें अभेदरूप (एक) प्रतीत हुआ जो सच्चि-दानन्द जगत्‌का उपादान कारण है वही जीव

भावको तत्त्वोंकी एकतासे प्रा होजाता है उसका जो पञ्चभूतोंसे पृथक् ज्ञान वह जिससे हो उस रीतिको कहते हैं ॥

साधनचतुष्टयं किम्॥नित्यानित्य-वस्तुविवेकः ॥१॥ इहामुत्रार्थफल-भोगविरागः ॥२॥ शमादिषट्संप-त्तिः ॥ ३ ॥ मुमुक्षुत्वं चेति ॥ ४॥

अबसे आगे यह ग्रन्थ शंकराचार्यजीने प्रश्न और उत्तररूपसे वर्णन किया है—प्रश्न—वे चारों-साधन कौनसे हैं जिससे युक्त अधिकारियोंको मोक्ष होता है—उत्तर—पहिला साधन नित्य और अनित्य वस्तुका विवेक है अर्थात् नित्य अनित्य वस्तुका पृथक्२ज्ञान है-१। दूसरा साधन इस लोक और परलोकके जो पदार्थ और फल उनके भोगों विरागका है अर्थात् दोनो लोकोंके भोगों

त्यागका २ । तीसरा साधन शम आदि जो छः पदार्थ हैं उनकी संपत्ति (सिद्धि) है ३ । चौथा साधन मुमुक्षुत्व है अर्थात् मोक्षकी अभिलाषा है ४ । ये चारों मुक्तिके हेतु हैं ॥

नित्यानित्यवस्तुविवेकः कः । नित्यवस्त्वेकं ब्रह्म तद्व्यतिरिक्तं सर्वमनित्यम् । अयमेव नित्यानित्यवस्तुविवेकः ॥

प्र०--नित्य और अनित्य वस्तुका विवेक क्या है--उ०--नित्य (सत्य) वस्तुरूप एक ब्रह्मही है उस ब्रह्मसे भिन्न संपूर्ण जगत् अनित्य (मिथ्या वा असत्)है-यही नित्य-अनित्य वस्तुका विवेक कहाता है और यही सब कारणोंमें मुख्य है ॥

विरागः कः । इह स्वर्गभोगेषु इच्छाराहित्यम् ॥

प्र०--विराग क्या है-उ०--इस लोक और स्वर्ग आदि परलोकके भोगोंकी इच्छाका त्याग अर्थात् हृदयमें दोनों लोकोंके विषयभोगकी वासनाका उदय न होना, विराग कहाता है ॥

शमादिसाधनसंपत्तिः का। शमो दम उपरमस्तितिक्षा श्रद्धा समाधानं चेति ॥

प्र०--शम आदि छः साधनोंकी संपत्ति क्या है अर्थात् वे शम आदि छः साधन कौन हैं जिनसे कि संपत्ति (होना) मोक्षका हेतु है--उ०--शम--दम उपरम-तितिक्षा--श्रद्धा--समाधान इन छः साधनोंके होनेको शमादि षट् संपत्ति कहते हैं ॥

शमः कः । मनोनिग्रहः ॥ दमः कः। चक्षुरादिबाह्येन्द्रियनिग्रहः॥ उपरमः कः॥ स्वधर्मानुष्ठानमेव॥ तितिक्षा का ।

शीतोष्णसुखदुःखादिसहिष्णुत्वम् ॥ श्रद्धा कीदृशी । गुरुवेदांतवाक्यादिषु विश्वासः श्रद्धा ॥ समाधानं किम् । चित्तैकाग्रता ।

प्र०–शम किसका नाम है- उ०मनके निग्रह (वशीभूत) करनेको शम कहते हैं–प्र०–दम किसकी संज्ञा है–उ०–नेत्रआदि बाह्य(बाहरकी) इंद्रियोंके निग्रहको दम कहतेहैं–प्र०–उपरम किसको कहते हैं–उ०–अपने धर्मकाही अनुष्ठान करना यहाँ (एव) पदके लिखनेसे ग्रंथकारने यह सूचित कियाहै कि अपने धर्ममें तत्पर होकर शब्द स्पर्श आदि संपूर्ण विषयोंसे चित्तको निवृत्त कर-ना अर्थात् अन्तरात्माके विचारोंमें आरूढ होकर संपूर्ण लौकिक व्यवहारोंसे उपरत (उदासीन) रहना इसका नाम उपरम है–प्र०–तितिक्षा क्या

वस्तु है--उ०--शीत और उष्ण (ठंढ) और तेज और सुख दुःख और मान अपमान आदिको धीरतासे सहना अर्थात् अपनी प्रकृतिके प्रतिकूल (विरुद्ध) शीत आदिकी प्राप्तिके समयमें भी निर्विकार रहना इसको तितिक्षा कहते हैं--प्र०--श्रद्धा किसप्रकारकी होतीहै--उ०--गुरु और वेदांतके जो वाक्य हैं उनमें जो विश्वास(यथार्थबुद्धि) है उसकोही श्रद्धा कहते हैं--प्र०--समाधान क्या कहाता है--उ०--चित्तकी एकाग्रताको समाधान कहते हैं अर्थात् गुरु और वेदान्तके वाक्योंको एकान्तमें बैठकर एकाग्रबुद्धिसे विचारना वा किसी अधिकारीको उपदेश करना इस चित्तकी स्थिरताको समाधान कहते हैं-यह शमआदिछः-की संपत्ति रूप तीसरा साधन मोक्षका है ॥

मुमुक्षुत्वं किम् । मोक्षो मे भूयादितीच्छा ॥

प्र०--मुमुक्षुत्व किसको कहते हैं--उ०--मेरा मोक्ष हो अर्थात् संसारके दुःखोंसे मेरी निवृत्तिहो इस इच्छाका नाम मुमुक्षुता है यह संसार निवृत्त होनेकी इच्छारूप, मोक्षका चौथा कारण है ॥

एतत्साधनचतुष्टयम् । ततस्तत्त्ववि-वेकस्याधीकारिणो भवंति ॥ तत्त्ववि-वेकः कः । आत्मा सत्यस्तदन्यत् सर्वं मिथ्येति ॥

ये चारों मोक्षके साधन हैं--प्रथम इनकी यत्नसे सिद्धिके अनंतर --मनुष्य तत्त्वविवेकके अधिकारी होते हैं अर्थात् इन चारों साधनोंकी महिमा(बल) से तत्त्वोंसे पृथक् जो आत्मा उसको जान सकते हैं ॥ प्र०--तत्त्वविवेक किसको कहते हैं--उ०--आत्मा (जीव ईश्वर) सत्य है तिससे अन्य जो नामरूपात्मक जगत् है वह मिथ्या है इस निश्च-यको तत्त्वविवेक कहते हैं ॥

आत्मा कः । स्थूलसूक्ष्मकारणशरीराद्व्यतिरिक्तः पंचकोशातीतः सन् अवस्थात्रयसाक्षी सच्चिदानन्दस्वरूपः सन् यस्तिष्ठति स आत्मा ॥

प्र०--आत्मा किसको कहते हैं-०उ--स्थूल सूक्ष्म--कारण--इन तीन प्रकारके शरीरोंसे भिन्न और अन्नमय आदि पांचकोशोंसे परे और जाग्रत स्वप्न सुषुप्तिरूप तीन अवस्थाओंका जो साक्षी (द्रष्टा) होकर सत् चित आनंदरूप टिकता है अर्थात् तीनों शरीरोंके बाहिर भीतर स्थित है वही आत्मा है ॥

स्थूलशरीरं किम् । पंचीकृतपंचमहाभूतैःकृतं सत्कर्मजन्यं सुखदुःखादिभोगायतनं शरीरम् अस्ति जायते

वर्धते विपरिणमते अपक्षीयते विनश्यतीति षड्विकारवदेतत्स्थूलशरीरम् ॥

प्र०-स्थूल शरीर किसको कहते हैं-उ०-पंचीकरण किये पांच महाभूतोंने जो किया हो-और उत्तम कर्मोंसे उत्पन्न हो और सुख दुःख आदि भोगोंका आयतन (स्थान) हो अर्थात् जिसमें स्थित होकर जीवात्मा सुख दुखोंको भोगे-और जो शरीररूप है अर्थात् नाशवान् है-और होना अर्थात् वर्तमानकालमें स्थिति और माताके गर्भसे उत्पत्ति-विपरिणाम अर्थात् क्रम २ से बढना वा घटना-और अपक्षय (वृद्ध अवस्थामें थकना) और अन्त अवस्थामें नाशकी प्राप्ति--इन स्थिति आदि छः विकारोंवाला जो है वही स्थूल शरीर है ॥

सूक्ष्मशरीरं किम्। अपंचीकृतपंच- महाभूतैः कृतं सत्कर्मजन्यं सुखदुःखादिभोगसाधनं पंचज्ञानेन्द्रियाणि पंच कर्मेन्द्रियाणि पंच प्राणादयः मनश्चैकं बुद्धिश्चैका एवं सप्तदशाकलाभिः सह यत्तिष्ठति तत्सूक्ष्मशरीरम्॥

प्र०-सूक्ष्म शरीर किसको कहते हैं-उ०-पंचीकरण नहीं किये पांच महाभूतोंसे जो कियागया हो और उत्तम कर्मसे उत्पन्न हो और सुख दुःख आदि भोगोंका साधन हो और पांच ज्ञानइन्द्रिय और पांच कर्मइन्द्रिय और प्राण आदि पांच और एक मन और एक बुद्धि इन सत्रह १७-कलाओं सहित जो टिकता है उसको सूक्ष्मशरीर कहते हैं अर्थात् इन सत्रह तत्त्वोंके समूहका सूक्ष्म-शरीर नाम है॥

श्रोत्रं त्वक् चक्षुःरसनाघ्राणम् इति-पंच ज्ञानेन्द्रियाणि ॥ श्रोत्रस्य दिग्दे-वता। त्वचो वायुः।चक्षुषः। सूर्यः। रस-नाया वरुणः। घ्राणस्य अश्विनौ इति ज्ञानेन्द्रियदेवताः ॥ श्रोत्रस्य विषयः शब्दग्रहणम् ।त्वचो विषयः स्पर्श-ग्रहणम्। चक्षुषोविषयः रूपग्रहणम् । रसनाया विषयःरसग्रहणम्। घ्राणस्य विषयः गंधग्रहणम् इति ॥

श्रोत्र–त्वचा–नेत्र–रसना-घ्राण-ये पांच ज्ञान-इन्द्रिय हैं–और इन पांचोंमें श्रोत्रका देवता दिशा है और त्वचाका देवता वायु है और नेत्रोंका देवता सूर्य है रसना (जिह्वा) का देवता वरुण है और घ्राणका देवता अश्विनीकुमार हैं ये पांचों इंद्रि-योंके पृथक्२पांच देवता हैं–और श्रोत्रका विषय

शब्दका ग्रहण है–और त्वचाका विषय स्पर्शका ग्रहण है–और नेत्रका विषय रूपका ग्रहण है। रसनाका विषय रस (खट्टा आदि) का ग्रहण है और घ्राणका विषय गन्धका ग्रहण है–इन पांचों विषयोंको श्रोत्र आदि पांचों ज्ञानइंद्रिय अपनेर देवताओं सहित ग्रहण करती हैं ॥

वाक्पाणिपादपायूपस्थानीति पंच कर्मेंद्रियाणि ॥ वाचो देवता वह्निः हस्तयोरिंद्रः। पादयोर्विष्णुः। पायोर्मृत्युः।उपस्थस्यप्रजापतिःइति कर्मेंद्रियदेवताः ॥ वाचो विषयः भाषणम्। पाण्योर्विषयः वस्तुग्रहणम्। पादयोर्विषयः गमनम्। पायोर्विषयः मलत्यागः उपस्थस्य विषयः आनंद इति॥

वाणी–हाथ–चरण–गुदा–लिङ्ग–ये पांच कर्म-

इन्द्रिय हैं—इन पांचोंमें वाणीका देवता अग्नि है—और हाथोंका देवता इन्द्र है—चरणोंका देवता विष्णु है और गुदाका देवता मृत्यु है—और लिंगका देवता प्रजापति है, ये कर्म इन्द्रियोंके देवता हैं—और वाणीका विषय भाषण (बोलना) है—हाथोंका विषय वस्तुका ग्रहण करना है-चरणोंका विषय गमन करना है-गुदाका विषय मलका त्याग है—और लिंगका विषय विषयभोगका आनंद है इन पांचों विषयोंको अपने २ देवताओंसे युक्त पांचों कर्मइन्द्रिय ग्रहण करती हैं ॥

कारणशरीरं किम्। अनिर्वाच्यानाद्यविद्यारूपं शरीरद्वयस्य कारणमात्रं सत्स्वरूपाऽज्ञानं निर्विकल्पकरूपं यदस्ति तत्कारणशरीरम् ॥

प्र०-कारणशरीर किसको कहते हैं-उ०-सत्स्व

वा झूठी कहनेमें जो न आवे क्योंकि झूठी कहैं तो मायासे जगत्‌की उत्पत्ति न बनेगी-सच्ची कहे तो ज्ञानसे नष्ट न होगी-जैसे रज्जुके सर्पको मिथ्या कहैं तो भय कंप आदि न होंगे और सत्य कहैं तो विचारसे नाश न होगा इससे अनिर्वचनीय है इस प्रकार मायाभी अनिर्वचनीय है अर्थात् न सत्य है न झूठ है केवल भासमात्र है--और अनादि(उत्पत्तिसे रहित) और अविद्या (अज्ञान) रूप-और स्थूलसूक्ष्म दोनों शरीरोंका जो कारणमात्र(बीज) है अपने स्वरूपका अज्ञान और निर्विकल्पकरूप जो है उस मायाको कारणशरीर कहते हैं ॥

अवस्थात्रयं किम् । जाग्रत्स्वप्न-सुषुप्त्यवस्थाः ॥

प्र०—तीन अवस्था कौनसी हैं—उ०—जाग्रत् स्वप्न-सुषुप्ति ये तीन अवस्था हैं ॥

जाग्रदवस्था का । श्रोत्रादिज्ञानेंद्रियैः शब्दादिविषयैश्च ज्ञायते इति यत्त सा जाग्रदवस्था । स्थूलशरीराभिमानी आत्मा विश्व इत्युच्यते ॥

प्र०—जाग्रत् अवस्था किसको कहते हैं—

उ०—श्रवण आदि पांच इन्द्रिय और शब्द आदि पांच विषयोंसे जब जानी जांय अर्थात् श्रोत्र-त्वचा-नेत्र-रसना-नासिका इन पांचों ज्ञानेंद्रियोंसे जिस अवस्थामें शब्द,स्पर्श, रूप रस,गंध इन पांचों विषयोंका क्रमसे ज्ञान हो अर्थात् इन इंद्रियोंके द्वारा शब्द आदि स्थूल भोगोंको जीवात्मा जिसमें भोगे-उस अवस्था समयको जाग्रत् कहते हैं-और स्थूल शरीरका अभिमानी जो आत्मा है उसे विश्व कहते हैं और स्थूल भोगोंका भोक्ता यह विश्वरूप आत्मा अपनी जाग्रत् अवस्थासे

भिन्न है क्योंकि अवस्था मिथ्या रूप है आत्मा चेतन रूप नित्य है ॥

स्वप्नावस्था केति चेत्। जाग्रदवस्थायां यद् दृष्टं यच्छ्रुतं तज्जनितवासनया निद्रासमये यः प्रपंचः प्रतीयते सा स्वप्नावस्था। सूक्ष्मशरीराभिमानी आत्मा तैजस इत्युच्यते ॥

प्र०—स्वप्न अवस्था कौनसी है ऐसा कहोगे तो सुनो उ०—जाग्रत्अवस्थामें जो देखा हो वा सुना हो उसमें उत्पन्न हुई जो वासना आत्मामें संस्कार उससे निद्राके समय जो प्रपंच (जगत्) प्रतीत होता हैं उस स्वप्नके समयको स्वप्नावस्था कहते हैं और यह स्वप्नावस्था सूक्ष्म शरीरसे होती है उस सूक्ष्म शरीरके अभिमानी आत्माको तैजस कहते हैं क्योंकि वासनामयी जो भोग उनका

न्नरसे आत्मा तेजोरूप अपने प्रकाशसे प्रका-
शित न और अवस्थाका साक्षी तैजस है ॥

अतः सुषुप्त्यवस्था का । अहं किमपि न जानामि सुखेन मया निद्रानुभूयत इति सुषुप्त्यवस्था । कारणशरीराभिमानी आत्मा प्राज्ञ इत्युच्यते ॥

प्र०--इसके अनंतर जो सुषुप्ति अवस्था है वह कौनसी है--उ०--मैंने कुछ नहीं जाना मुझे ऐसी सुखसे निद्राका ज्ञान हुआ श्रुतिमें भी लिखा है के मैं सुखसे सोया कुछ भी न जानता भया अर्थात् आनन्दसे निद्राका अनुभव हुआ-यह अनुभव जिसकालमें होता है उसका नाम सुषुप्ति अवस्था है इसको ही कारणशरीर और आनंदमय कोश कहते हैं और इस अवस्थाके अभि-

१ आनन्दभुक्चेतोमुखः ।

मानी आत्माको प्राज्ञ कहतेहैं-अर्थात् य. हैं
आनन्दरूपके भानसे रहित जो अज्ञान उ
साक्षी है और इंद्रियोंकी सहायताके बिना
अपनी चेतनतासे वासनामय विषयोंको भली
प्रकार जानता है और भोगता है इसीसे प्राज्ञ
कहाता है । श्रुतिमें भी कहा है कि आनन्दका
भोक्ता चेतनरूपही सुषुप्ति अवस्थामें है ॥

पंचकोशाः के । अन्नमयः प्राणमयः मनोमयः विज्ञानमयः आनन्दमयश्चेति॥

प्र०--पञ्चकोश कौनसे हैं?उ०-अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-आनन्दमय ये पां कोश हैं अर्थात् चेतनरूप जो आत्मा उसके आच्छादक हैं ॥

अन्नमयः कः ॥ अन्नरसेनैव भूत्वा

---

१ सुखमहमस्वाप्सं न किञ्चिदवेदिषम् ।

...नै, वृद्धिं प्राप्य अन्नरूपपृथिव्यां
...यते तदन्नमयः कोशः स्थूल-
...म् ॥

प्र०—अन्नमय कोश किसको कहते हैं—

उ०—अन्नके रससे होकर और अन्नके रससेही बढ़कर जो अन्नरूप पृथिवीमें ही लीन(नष्ट)हो जाय उस स्थूलशरीरको अन्नमय कोश कहतेहैं॥

...प्राणमयः कः । प्राणादिपंचवायवः वागादींद्रियपंचकं प्राणमयः ॥

प्र०—प्राणमय कोश किसको कहते हैं—

उ०—प्राण-अपान-व्यान-उदान-समान ये पांचों प्राण और वाणी आदि पांचों कर्म इन्द्रिय ... प्राणमय कोश कहाता है और यह क्रिया-शक्ति है क्योंकि शरीरमें जितनी क्रिया होती हैं उन सबका कारण प्राणमय कोशही है ॥

मनोमयः कोशः कः । मनश्च ज्ञानेंद्रियपंचकं मिलित्वा भवति स मनोमयः कोशः ॥

प्र०--मनोमय कोश किसको कहते हैं--

उ०--मन और पांच ज्ञानइन्द्रियां मिलकर जो होता है वह मनोमय कोश कहाता है और यह इच्छाशक्ति है क्योंकि जिस २ वस्तुकी इच्छा आत्मामें होती है वह मनोमय कोशकेही सहायतासे होती है ॥

विज्ञानमयः कः । बुद्धिज्ञानेंद्रियपंचकं मिलित्वा यो भवति स विज्ञानमयः कोशः ॥

प्र०--विज्ञानमय कोश किसको कहतेहैं-

उ०--बुद्धि और ज्ञानइन्द्रियपञ्चक, इनको मिलाकर जो होता है वह विज्ञानमय कोश होताहै

और यह ज्ञानशक्ति है क्योंकि आत्मामें जिस २ पदार्थका ज्ञान होताहै वह बुद्धि और ज्ञानेन्द्रियोंकीही सहायतासे होता है ॥

आनंदमयः कः। एवमेव कारणशरीरभूताविद्यास्थमलिनसत्त्वं प्रियादिवृत्तिसहितं सत् आनंदमयः कोशः एतत्कोशपंचकम् । मदीयं शरीरं मदीयाःप्राणाः मदीयं मनश्च मदीया बुद्धिर्मदीयं ज्ञानमिति स्वेनैव ज्ञायते। तद्यथा-मदीयत्वेन ज्ञातं कटककुंडलगृहादिकं स्वस्माद्भिन्नं तथा पञ्चकोशादिकं मदीयत्वेन ज्ञातमात्मा न भवति ॥

प्र०-आनन्दमय कोश किसको कहते हैं-

उ०-इसी पूर्वोक्त प्रकारसे कारण शरीररूप अवि-

यामें स्थित जो प्रिय मोद आदि वृत्तियोंसे युक्त मलिन सत्त्व है अर्थात् रजोगुण तमोगुणसे तिरस्कार किया सत्त्वगुण वह अभीष्ट वस्तुके देखनेसे सुखरूप जो प्रिय और अभीष्ट वस्तुकी प्राप्तिसे उत्पन्न सुखरूप जो मोद और अभीष्ट वस्तुके भोगसे जन्य सुखरूप जो प्रमोद,इन वृत्तियोंसे युक्त हुआ आनंदमय कोश होता है और इसमें अधिक आनंद होताहै इससे इसका नामआनंदमय है—ये पांच कोश हैं—इनको आत्मा अपने आप इस प्रकार एकतासे जानताहै कि,मेरा शरीर है—मेरे प्राण हैं मेरा मन है मेरी बुद्धि है और मेरा ज्ञान है तिससे जिसप्रकार मदीयतासे अर्थात् मेरे हैं इस बुद्धिसे जाने हुए कटक (कडा) कुंडल और गृहआदि अपनेसे भिन्न होनेसे आत्मारूप नहीं हैं तिसी प्रकार मदीयतासे जाने हुए ये पूर्वोक्त पांच कोश भी आत्मासे भिन्न होनेसे

आत्मारूप नहीं हैं क्योंकि आत्मा इनका साक्षी है और ये मायाके कार्य हैं ॥

आत्मा तर्हि कः। सच्चिदानंदस्वरूपः ॥

प्र०--तो कहो आत्मा कौन है उ०-सत् चित् आनन्दरूप आत्मा है-

सत्किम्। कालत्रयेऽपि तिष्ठतीति सत्॥ चित्किम्। ज्ञानस्वरूपः॥ आनंदः कः। सुखस्वरूपः। एवं सच्चिदानंदस्वरूपं स्वात्मानं विजानीयात् ॥

प्र०—सत् किसको कहते हैं—उ०-भूत भविष्यत् वर्तमानरूप तीनों कालोंमें जो एकरस टिके अर्थात् न्यूनाधिक भावको प्राप्त न हो उसे सत् कहते हैं—प्र०—चित् किसको कहतेहैं—उ०-ज्ञानरूपको चित् कहते हैं अर्थात् जो संपूर्ण पदार्थोंका ज्ञाता-साक्षी अनुभवरूप है उसे चेतन ज्ञानस्वरूप आनंद कहते हैं अर्थात् दुःखसे

जिसका भेद (नाश) न होसके ऐसा जो सुख-रूप कूटस्थ ब्रह्म वही आनंद है। इस पूर्वोक्त तीन प्रकारका जो सच्चिदानंद ब्रह्म है उसको अपने आत्मास्वरूप जाने अर्थात् अपने जीवात्मा और उसकी एकताको जानकर नामरूपात्मक जगत्को मिथ्या समझे ॥

अथ चतुर्विंशतितत्त्वोत्पत्ति-प्रकारं वक्ष्यामः ॥

अब मायासे उत्पन्न जो चौबीस तत्त्व हैं उनके उत्पत्तिके प्रकारको कहते हैं ॥

ब्रह्माश्रया सत्त्वरजस्तमोगुणात्मिका माया अस्ति। तत आकाशः संभूतः। आकाशाद्वायुः। वायोस्तेजः। तेजस आपः। अद्भ्यः पृथिवी ॥

ब्रह्म है आश्रय (आधार वा प्रवर्तक) जिसका ऐसी सत्त्वगुण रजोगुण तमोगुणरूप माया है

र्थात् इन तीनों गुणोंकी साम्यावस्था तुल्यस्थिति है जिसको मूलप्रकृति और प्रधानभी सांख्यमत-वाले कहते हैं और अव्याकृतभी इसकाही नाम है-यह पूर्वोक्त है मुख्यरूप जिसका ऐसी माया सो पूर्वोक्त सच्चिदानंदरूप ब्रह्मकी इच्छाके अनुसार प्रथम आकाश उत्पन्न हुआ और आकाशसे वायु और वायुसे तेज-और तेजसे जल-और जलसे पृथ्वी उत्पन्न भई-इन आकाश आदि पांचों भूतोंके मध्यमें सत्त्व गुण आदि तीनों गुण वर्त-मान हैं इससे ये भूतभी त्रिगुणात्मक हैं ॥

एतेषां पञ्चतत्त्वानां मध्ये आकाशस्य सात्त्विकांशाच्छ्रोत्रेन्द्रियं संभूतम्। वायोः सात्त्विकांशात्त्वगिंद्रिय संभु-तम् । अग्नेः सात्त्विकांशाच्चक्षुरि-न्द्रियं संभूतम् । जलस्य सात्त्विकां-

शाद्रसनेंद्रियं संभूतम् । पृथिव्याः सात्त्विकांशाद् घ्राणेंद्रियं संभूतम् । एतेषां पञ्चतत्त्वानां समष्टिसात्त्विकांशान्मनोबुद्ध्यहंकारचित्तान्तः करणानि संभूतानि ॥

इन पांचों तत्वोंके मध्यमें आकाशमें जो सत्व गुणका अंश है उससे श्रोत्र(कान)इद्रिय उत्पन्न हुई-और वायुमें जो सत्वगुणका अंश है उससे त्वचा इद्रिय उत्पन्न भई-और अग्निमें जो सत्व गुणका अंशहै उससे चक्षुरिंद्रिय उत्पन्न हुई और जलमें जो सत्वगुणकाअंश है उससे रसनाइंद्रिय उत्पन्न भई-और पृथ्वीमें जो सत्वगुणका अंश है उससे घ्राण इंद्रिय उत्पन्न हुई और इन पांचो तत्त्वोंका जो समष्टि सबका सत्वगुणी अंश है उससे मन बुद्धि अहंकार चित्त रूप चार प्रकारके अन्तः करण उत्पन्न हुआ अर्थात ऐसा अन्तः

करण (भीतरकी इंद्रिय) उत्पन्न हुआ जिसके मन आदि चार भेद हैं ॥

संकल्पविकल्पात्मकं मनः । निश्चयात्मिका बुद्धिः॥अहंकर्त्ता अहंकारः ॥ चिन्तनकर्तृ चित्तम् । मनसो देवता चन्द्रमाः । बुद्धेर्ब्रह्मा । अहंकारस्य रुद्रः । चित्तस्य वासुदेवः ॥

उन चारोंमें संकल्प विकल्प रूपको मन कहते हैं अर्थात् यह करने योग्य है वा नहीं इस संदेहको जो करे वह मन कहाता है और निश्चय जिसका रूप है वह बुद्धि है अर्थात् यही करने योग्य है यह निश्चय जिससे हो वह बुद्धि है और अहंकार का जो कर्ता वह अहंकार है अर्थात् मैंने किया इस अहं बुद्धिका जिसमें उदय हो वह अहंकार कहाता है और संपूर्ण वस्तुओंका चिंतन (स्मरण

वा विचार)जो करे वह चित्त है विद्वान् एकही अन्तःकरण वृत्तियों (विषयों) के भेदसे भिन्न २ कहाता है और मनका देवता चन्द्रमा है बुद्धिका देवता ब्रह्मा है-अहंकारका देवता रुद्र है, चित्तका देवता वासुदेव है इस प्रकार पूर्वोक्त पांचों भूतोंसे पांच ज्ञानेन्द्रिय और चार अन्तःकरण ये नव९ पदार्थ सत्त्वगुणके अंशसे उत्पन्न हुए ॥

एतेषां पञ्चतत्त्वानां मध्ये आकाशस्य राजसांशाद्वागिंद्रियं संभूतम् । वायोः राजसांशात्पाणींद्रियं संभूतम् ।, वह्ने रजसांशात् पादेंद्रियं संभूतम् । जलस्य राजसांशादुपस्थेन्द्रियं संभूतम् । पृथिव्या राजसांशाद्गुदेन्द्रियं संभूतम् । एतेषां समष्टिराजसांशात्पंच प्राणाः संभूताः ॥

इन पांचों भूतों (तत्त्वों)के मध्यमें आकाशके रजोगुणी भागसे वाणी इन्द्रिय उत्पन्न हुई और वायुमें जो रजोगुणका अंश है उससे हस्त इंद्रिय उत्पन्न हुई और अग्निमें जो रजोगुणका अंश है उससे चरणरूप कर्मइंद्रिय उत्पन्न हुईऔर जलके रजोगुणी भागसे उपस्थ (लिंग) इंद्रिय उत्पन्न हुई और पृथिवीमें जो रजोगुणका भाग है उससे गुदा इंद्रिय उत्पन्न हुई और इन पांचों भूतोंके समष्टि (सबका) रजोगुणके अंशसे पांच प्राण उत्पन्न हुये इस प्रकार पंच कर्मेन्द्रिय और पंच प्राण ये दश तत्त्व रजोगुणके अंशसे उत्पन्न हुये॥

एतेषां पंचतत्त्वानां तामसांशात्पंचीकृतपंचतत्त्वानि भवंति । पंचीकरणं कथम् इति चेत् । एतेषां पंचमहाभूतानां तामसांशस्वरूपम् एकम्

एकं भूतं द्विधाविभज्य एकमेकमर्धं पृथक् तूष्णीं व्यवस्थाप्य अपरमपरमर्धं चतुर्धा विभज्य स्वार्धमन्येषु अर्धेषु स्वभागचतुष्टयसंयोजनं कार्यम् तदा पंचीकरणंभवति। एतेभ्यः पंचीकृतपञ्चमहाभूतेभ्यः स्थूलशरीरं भवति। एवं पिण्डब्रह्माण्डयोरैक्यं संभूतम् ॥

इन पांचों तत्त्वोंका जो तमोगुण शेष रहा हुवा अंश है उससे पञ्चीकरण किये पांचों भूत उत्पन्न होते हैं अर्थात् तमोगुणकी महिमासे महाभूतोंका पञ्चीकरण होजाता है कदाचित् कहो कि,पञ्चीकरण किस प्रकार होताहै तो सुनो इन पांच महाभूतोंके मध्यमें जो तमोगुणका अंशरूप एक २ भूत है उसका दो प्रकारसे विभाग करके अर्थात्

एक २ भूतके दो २ टुकड़े करके उनमेंसे एक २ भागको पृथक् तूष्णीं (चुपचाप) स्थापन करके और दूसरे२ जो भाग हैं उनके चार भाग करके अपनेसे अन्य जो भूत हैं उनके तूष्णीं रक्खे हुए भागोंमें एक २ भागको मिलादे इसप्रकार पञ्ची-करण होता है । इस पञ्चीकरणके करनेसे एक २ भूतमें आधा भाग अपना और आधेमें अपनेसे अन्य चारों भूतोंके ४ भाग होते हैं इसीसे व्यास-जीने लिखा है कि अधिकतासे यह पृथिवी है यह वायु है इत्यादि कथन होता है इस प्रकार पंचीकरण किये हुए पञ्च महाभूतोंसे स्थूल शरीर होता है इसी प्रकार ब्रह्माण्ड भी उत्पन्न होता है ऐसे पिण्ड और ब्रह्माडकी एकता समझनी ॥

स्थूलशरीराभिमानी जीवनामकं ब्रह्म प्रतिबिंबं भवति सएव जीवःप्रकृत्या

---

१ वैशेष्य त्तद्वादस्तद्वादः ।

स्वस्मात् ईश्वरं भिन्नत्वेन जानाति । अविद्योपाधिः सन् आत्मा जीव इत्युच्यते ॥

स्थूल शरीरका अभिमानी जीव नाम ब्रह्मका प्रतिबिम्ब होता है वही जीव प्रकृति (स्वभाव)से ईश्वरको अपनेसे भिन्न जानता है और अविद्याके उपाधिसे वह आत्मा जीव कहाता है अर्थात जैसे जलसे पूर्ण घटमें जो आकाशके सूर्यका प्रतिबिंब है वह घटके नाशसे प्रतिबिंबभूत सूर्यरूप होजाता है इसी प्रकार जीवरूप प्रतिबिंबका आश्रय जो माया (अज्ञान) उसके नाश होनेसे जीव भी ब्रह्म भावको प्राप्त होजाता है और ज्ञानसे पूर्व मायाके अधीन होनेसे मायाके वशीभूत होता है तिसीसे अपनेको ईश्वरसे भिन्न जानता है और मायाके कार्य जो स्थूल सूक्ष्म शरीर उनके संग एकतासे

दुग्ध जलके समान एकरूप हुआ विषय भोगोंके लिये नाना प्रकारके कर्मोंको करता है और उन कर्मोंके फल सुख दुःखों (स्वर्ग नरक) को भोगता और अविद्यारूप उपाधिसे आत्माही जीव बनता है-और रजोगुण तमोगुणकी न्यूनता सत्त्वगुणकी महिमासे प्रतीत होती है अर्थात् सत्त्वगुण प्रधान से वह माया कहाती है और जहां सत्त्वगुण तो न्यून हो और रजोगुण तमोगुण प्रधान हो वह अविद्या अज्ञान कहाती है और उसी अविद्यासे आच्छादित ढका आत्मा जो स्थूल शरीरका अभीमनी है उसकाही नाम जीव है और वह अविद्यामें ब्रह्मका प्रतिबिम्ब जीव अविद्याके नाशसे ब्रह्मरूप होजाता है ॥

मायोपाधिःसन् ईश्वर इत्युच्यते एव-मुपाधिभेदाज्जीवेश्वरभेददृष्टिर्याव-

त्पर्यन्तं तिष्ठति तावत्पर्यन्तं जन्म-मरणादिरूपसंसारो न निवर्तते तस्मात्कारणान्न जीवेश्वरयोर्भेदबुद्धिः स्वीकार्या ॥

मायारूप जिसकी उपाधि है वह ईश्वर कहा जाता है अर्थात् मायामें जो ब्रह्मका प्रतिबिंब है तिसका नाम ईश्वर है और वही जगतका कर्त्ता है और माया(अविद्यारूप)उपाधियोंसे शुद्ध चैतन्य रूप परब्रह्म अपनी महिमामें स्थित होनेसे सत्य रूपहै-इसप्रकार मायाऔर अविद्यारूप उपाधिके वशसे जीव औरईश्वरके विषय जबतक भेदबुद्धि रहेगी तबतक जन्म मरणआदि रूपसंसार निवृत्त नहीं होता है तिससे जीव औरईश्वरमेंकदाचित् भी भेदबुद्धि नहीं करनी अर्थात् जीव और ईश्वरको भी ज्ञानके द्वारा ब्रह्मरूपही समझना ॥

ननुसाहंकारस्यकिंचिज्ज्ञस्यजीवस्य निरहंकारस्य सर्वज्ञस्येश्वरस्य तत्त्वमसीति महावाक्यात्कथमभेदबुद्धिः स्यादुभयोः विरुद्धधर्माक्रांतत्वात् ॥

कदाचित कहो कि, अहंकारसे युक्त और सर्वज्ञ जो ईश्वर है उसकी 'तत्त्वमसि' इस महावाक्यसे कैसे अभेद बुद्धि होगी, क्योंकि दोनों विरुद्ध धर्मोंसे आक्रांत (युक्त) हैं अर्थात् जो अल्पज्ञत्व अहंकार आदि धर्मवाला है सर्वज्ञत्व अहंकार रहित तत्त्व धर्मवाला कैसे हो सकता है ॥

इति चेन्न । स्थूलसूक्ष्मशरीराभिमानी त्वंपदवाच्यार्थ उपाधिविनिर्मुक्तं समाधिदशासम्पन्नं शुद्धं चैतन्यं त्वंपदलक्ष्यार्थः ॥

ऐसे मत कहो क्योंकि स्थूल और सूक्ष्म शरी-

रका जो अभिमानी त्वंपदका वाच्य अर्थ है और उपाधिसे रहित समाधि दशासेयुक्तजो शुद्ध चैतन्य वह त्वंपदका लक्ष्य अर्थ है अर्थात् तत्त्वमसि इस महावाक्यमें तत त्वं असि—जो तीन पद हैं उनका यह अर्थ है कि वह जगत्कर्ता जो सर्वज्ञ ईश्वर हैं वही तू है—यहां तत्पदका ईश्वरऔरत्वंपदका जीव और असिपदका—है—क्रमसे अर्थ है और इस पूर्वोक्त सामान्य अर्थसे भिन्नतत्त्वमसि इस महावाक्यका विशेष यह अर्थ है कि तत और त्वम् पदके दो अर्थ हैं—एक वाच्य और दूसरा लक्ष्य—जैसे घटपदका वाच्य अर्थ गोलाकार है और लक्ष्य अर्थ—मूलकारणरूप मृत्तिका है इसी प्रकार माया और अविद्याका सम्बन्ध जिसमें है वह तत् और त्वंपदका वाच्य अर्थ है और माया और अविद्याके सम्बन्धसे रहित जो ब्रह्म वह दोनों पदोंका लक्ष्य अर्थ है ॥

एवं सर्वज्ञत्वादिविशिष्टईश्वरःतत्पद-वाच्यार्थः॥उपाधिशून्यं शुद्धचैतन्यं तत्पदलक्ष्यार्थः।एवं च जीवेश्वरयोः चैतन्यरूपेणाऽभेदे बाधकाभावः॥

इसीप्रकार- सर्वज्ञत्व आदि विशेषणोंसे युक्त जो ईश्वर वह तत् पदका वाच्यअर्थ है और उपाधिसे शून्य जो शुद्ध चैतन्यरूप ब्रह्म वह तत् पदका लक्ष्य अर्थ है इस प्रकार जीव और ईश्वर जो तत्पदके अर्थ हैं उनके चैतन्यरूप लक्ष्य अर्थ के अभेद(एकता) में कोई बाधक नहीं अर्थात् चैतन्यरूपसे जीव और ईश्वर एकहै ॥

एवं च वेदान्तवाक्यैः सद्गुरूप-देशेन च सर्वेष्वपि भूतेषु येषां ब्रह्म-बुद्धिरुत्पन्ना ते जीवन्मुक्ता इत्यर्थः ननु जीवन्मुक्तः कः। यथा देहोऽहं

पुरुषोऽहं ब्राह्मणोऽहं शूद्रोऽहमस्मीति दृढनिश्चयस्तथा नाहं ब्राह्मणः नशूद्रः न पुरुषः किन्तु असंगः सच्चिदानंद-स्वरूपः प्रकाशरूपः सर्वान्तर्यामी चिदाकाशरूपोऽस्मीति दृढ निश्चय-रूपाऽपरोक्षज्ञानवान् जीवन्मुक्तः ॥

इसरीतिसे वेदान्त वाक्योंकेद्वारा—श्रेष्ठगुरुके उपदेशसे जिन प्राणियोंकी संपूर्ण भूतोंमें ब्रह्मबुद्धि उत्पन्नहोगई है वे जीवन्मुक्त हैं—प्र०—जीवन्मुक्त किसको कहते हैं—उ०—जैसे मैं देहहूं—पुरुष हूं—ब्राह्मणहूं—शूद्रहूं, यह दृढ निश्चय है इसी प्रकार न मैं ब्राह्मणहूं, न पुरुष हूं, न शूद्र हूं, किन्तु असंग सच्चिदानन्दस्वरूप,प्रकाशरूप, सबकाअ-न्तर्यामी चिदाकाशरूप हूं यह दृढ निश्चयरूप अपरोक्षज्ञान जिसको है वह जीवन्मुक्त है ॥

ब्रह्मैवाहमस्मीत्यपरोक्षज्ञानेन निखि-लकर्मबंधविनिर्मुक्तःस्यात्॥कर्माणि कतिविधानि सन्तीतिचेत्आगामि-संचितप्रारब्धभेदेनत्रिविधानि संति

ब्रह्महो मैं हूं, इस अपरोक्ष ज्ञानसे मनुष्य संपूर्ण कर्मरूप बन्धनोंसे विनिर्मुक्त होजाता है अर्थात् छुट जाता है कदाचित् कहोकि-कर्म के प्रकारके हैं तो सुनो आगामि-संचित-प्रारब्ध-इन भेदोंसे कर्म तीन प्रकारके होते हैं ॥

ज्ञानोत्पत्त्यनंतरं ज्ञानिदेहकृतं पुण्य-पापरूपं कर्म यदस्ति तदागामीत्य-भिधीयते ॥

ज्ञानकी उत्पत्तिके अनन्तर ज्ञानीके देहका किया जो पुण्यपापरूपी कर्म है वह आगामि

कहाता है, क्योंकि वह ज्ञानकी उत्पत्तिके पीछे होता है और वह भोगने योग्यहै ॥

संचितं कर्मकिम् । अनंतकोटिजन्मनां बीजभूतं सत् यत्कर्मजातं पूर्वार्जितं तिष्ठति तत्संचितं ज्ञेयम् ॥

प्र०--संचितकर्म किसको कहते हैं-उ०-अनंत कोटि जन्मोंका बीजरूप जो कर्मोंका समूह पूर्व संचितटिका हुआहै वह संचित जानना अर्थात् अनेक जन्मोंमें किया हुआ पुण्यपाप जीवात्मामें-इकट्ठा रहता है ॥

प्रारब्धकर्म किमिति चेत् इदं शरीरमुत्पाद्य इह लोके एवंसुखदुःखादिप्रदं यत्कर्म तत्प्रारब्धं भोगेन नष्टं भवति प्रारब्धकर्मणां भोगादेव क्षय इति ॥

प्र०-प्रारब्ध किसको कहतेहैं-उ०-इस शरीरको उत्पन्न करके इस लोकमें-इस प्रकार सुख-दुःख आदिका दाता (देनेवाला) जो कर्म है वह प्रारब्ध कहाता है-और वह प्रारब्ध कर्मभोगसेही नष्ट होजाता है क्योंकि प्रारब्ध कर्मोंकाभोगसेही क्षय होता है यह नियम है-क्योंकि इस वचनमें यह लिखा है कि किया हुआ शुभ और अशुभ कर्म अवश्य भोगने योग्य है-विना भोगके कोटियों कल्पोंमें भी नष्ट नहीं होता है ॥

संचितं कर्म ब्रह्मैवाहमिति निश्चयात्मकज्ञानेन नश्यति । आगामि कर्म अपि ज्ञानेन नश्यति। किंच आगामिकर्मणां नलिनीदलगतजलवत् ज्ञानिनां सम्बन्धो नास्ति ॥

---

१ अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् । नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि ।

संचित कर्मका नाश-मैंब्रह्महीहूँ इस निश्च यात्मक ज्ञानसे होता है और आगामि कर्म भी ज्ञानसेही नष्ट होता है परन्तु ज्ञानियोंको आगामि कर्मोंका सम्बन्ध इस प्रकार नहींहोता जैसे कमलके पत्तोंपर जलका सम्बन्ध नहीं होता ॥

किंच ये ज्ञानिनं स्तुवंति भजंति अर्चयंति तान्प्रति ज्ञानिकृतम् आगामि पुण्यं गच्छति । ये ज्ञानिनं निन्दन्ति द्विषंति दुःखप्रदानं कुर्वंति तान्प्रति ज्ञानिकृतं सर्वम् आगामि क्रियमाणं यदवाच्यं कर्म पापात्मकं तद्गच्छति॥

और ज्ञानीकी जो स्तुति-सेवा-करते हैं उनके प्रति ज्ञानका किया आगामि पुण्य जाताहै अर्थात मिलता है-और जो ज्ञानीकी निन्दा वैर करते हैं वा दुःख देते हैं उनके प्रति आगामि जो ज्ञानीका

किया हुआ पापरूप कर्म है वह जाताहै-सोई-इस श्रुतिमें लिखा है कि, मित्र पुण्य कर्म और वैरी पाप कर्मोंको ग्रहण करते हैं ॥

तथा चात्मवित्संसारं तीर्त्वा ब्रह्मानन्दमिहैव प्राप्नोति । तरति शोकमात्मविदिति श्रुतेः ॥

तिसी प्रकार आत्मज्ञानीसंसारसे पार होकर इस जन्ममेंही ब्रह्मानन्दको प्राप्तहोता है-सोई श्रुतिमें लिखाहै कि आत्मज्ञानी शोकको तरता है॥

तनुं त्यजतु वा काश्यां श्वपचस्य गृहेऽथ वा । ज्ञानसंप्राप्तिसमये मुक्तोऽसौ विगताशय इति स्मृतेश्च ॥

इति तत्त्वबोधप्रकरणं समाप्तम् ॥

---

१ सुहृदः पुंण्यकृत्यान्दुर्हृदः पापकृत्यान् गृह्णन्ति ।

और यह स्मृति भी है कि, ज्ञानी काशीमें देहको त्यागो वा चाण्डालके घरमें त्यागो परन्तु ज्ञानकी प्राप्तिके समयमें अन्तःकरणके मलोंसे रहित यह मुक्तरूपही है अर्थात् ज्ञानीके मरणके लिये देश काल वस्तु-इनका नियम नहीं है ॥

इति श्रीपंडितमिहिरचन्द्रकृततत्त्वबोध-
भाषाटीका समाप्ता ॥

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासने बंबई खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटा लैन, निज "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेसमें अपने लिये छापकर यहीं प्रकाशित किया।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस, मुंबई.